बाँस में होने वाले रोग एवं उनका निदान

उष्णकटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान

(भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद्)

डाकघर : आर.एफ.आर.सी., मण्डला रोड, जबलपुर – 482 021

अनुक्रमणिका

1.	बीजों के रोग एवंउनका उपचार	1
2.	बाँस रोपणी में होने वाले मुख्य रोग एवंउनका निदान/ पर्ण लक्ष्म रोग	2
3.	गेरूआ रोग/कन्दगलन रोग	3
4.	कल्ला सड़न रोग	4
5.	पर्ण गुच्छ रोग	5
6.	बाँस के भंडारण में पाये जाने वाले फफूँद	6

बाँस में होने वाले रोग एवं उनका निदान

बाँस जिसे हरा सोना और गरीबों की लकड़ी भी कहते हैं, मानव जीवन में जन्म से मृत्यु तक काम में आने वाली एक प्रमुख पादप जाति है, यह पादप जाति उष्णकटिबंधीय, उपोष्ण कटिबंधीय और शीतोष्ण क्षेत्रों में पैदा होती है। इसकी विश्व में 75 जातियाँ एवं 1250 प्रजातियाँ विद्यमान है। भारत वर्ष में इसके 20 वंश और 100 से अधिक प्रजातियाँ हैं, इनमें से डेन्ड्रोकलेमस् स्ट्रिक्टस् (*Dendrocalamus strictus*), बाम्बूसा बेम्बोस (*Bambusa bambos*), बाम्बूसा न्यूटेन्स (*Bambusa nutans*), बाम्बूसा अरन्डुनेसिया (*Bambusa arundinacia*) आदि मुख्य हैं। यह एक ऐसा देव कृत विकास है जो घोड़े, गाय, गेहूं और कपास की तरह परोक्ष रूप से मनुष्य के क्रमिक विकास के लिए उत्तरदायी है। बाँस कार्बन संचय में अत्यन्त उपयोगी प्रजाति है।

उच्च गुणवत्ता के बाँस पौधों का अधिक से अधिक रोपण कर बाँस वनों के क्षेत्र में वृद्धि एवं बाँस उद्योगों की स्थापना की संभावनाओं को साकार करने के उद्देश्य से बाँस मिशन की महत्वाकांक्षी योजना प्रारंभ की गयी है। स्वस्थ एवं अधिक उत्पादन के लिए बाँस में पाये जाने वाले रोग एवं उनके निदान की जानकारी होना अत्यंत आवश्यक है। बीजों से लेकर नर्सरी एवं वृक्षारोपणों में विभिन्न प्रकार के रोग देखे गये हैं।

बीजों के रोग एवं उनका उपचार -

बाँस के बीजों में 6 माह तक अच्छा अंकुरण देखा गया है। इसके बाद बाँस के बीजों की अंकुरण क्षमता क्रमशः घटती चली जाती है एवं 9 से 12 माह बाद बाँस के बीजों की अंकुरण क्षमता समाप्त हो जाती है। प्रायः यह देखा गया है कि 6 माह तक बाँस के बीजों में फफूंदों की संख्या कम एवं बाद में फफूंदों की संख्या बढ़ जाती है। बाँस के बीजों पर सामान्यतः एस्परजिलस, सिफेलोस्पोरियम, कीटोमियम, फ्यूज़ेरियम, पेनिसिलियम एवं ट्राइकोडर्मा आदि फफूंदों का संक्रमण देखा गया है।

बाँस के बीजों की अंकुरण क्षमता (*viability*) बनाये रखने के लिए बीजों में केल्सियम क्लोराइड डालकर भंडारण करना चाहिए एवं विभिन्न प्रकार के फफूँदों के संक्रमण से बचाव हेतु बीजों को थायरम 0.2% फफूँद नाशक (2 ग्राम प्रति किलो) से उपचरित कर भंडारण करना चाहिए।

बाँस रोपणी में होने वाले मुख्य रोग एवंउनका निदान -

रोपणियों में 3-6 माह के पौधों में वर्षा ऋतु के दौरान पत्तियों में काले धब्बे अथवा भूरे पावडर के समान लक्षण दिखाई देते हैं। यह रोग हवा द्वारा पत्तियों में फैलता है। फफूँद समूह के यह रोग पत्तियों पर पर्ण लक्ष्म रोग (*leaf spot, leaf rust*) लीफ नेक्रोसिस अथवा लीफ ब्लाच आदि लक्षणों के रूप में दिखाई देते हैं इनके संक्रमण से पत्तियां असमय पीली पड़कर गिरना शुरू हो जाती है और पौधों के स्वास्थ पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इन रोग ग्रस्त पत्तियों के बीजाणु कभी-कभी अनुकूल परिस्थितियों में पौधे के अग्रकलिका अथवा तने को भी संक्रमित कर अधिक नुकसान पहुंचाते हैं।

1. पर्ण लक्ष्म रोग (Leaf spot disease) -

यह बाँस की पत्तियों में पाया जाने वाला एक सामान्य रोग है। इस रोग के संक्रमण से पत्तियों पर काले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, जो कि कभी-कभी आपस में मिलकर पूरी पत्तियों पर फैल जाते हैं। काले भाग में सूक्ष्म बीजाणुओं से भरी हुई संरचनायें पाई जाती है। ये बीजाणु हवा द्वारा एक पौधे से दूसरे पौधे को रोग ग्रसित करते हैं। पर्णलक्ष्म रोग (*leaf spot disease*) इम्परफेक्ट समूह के सदस्य जैसे हेल्मिन्थोस्पोरियम (*Helminthosporium*) एक्सेरोहाइलम (*Exserohilum*) आल्टरनेरिया (*Alternaria*) करवुलेरिया (*Curvularia*) आदि फफूँदों द्वारा देखा गया है। यह रोग रोपणियों में बरसात अर्थातः जुलाई से सितंबर माह में अधिकांशतः पाया जाता है। इस रोग से बचाव के लिए जुलाई एवंअगस्त माह में रोपणियों में डाईथेन 45, 0.2 प्रतिशत (3 ग्राम प्रति लीटर) का पन्द्रह दिन के अन्तराल में छिड़काव करना चाहिए।

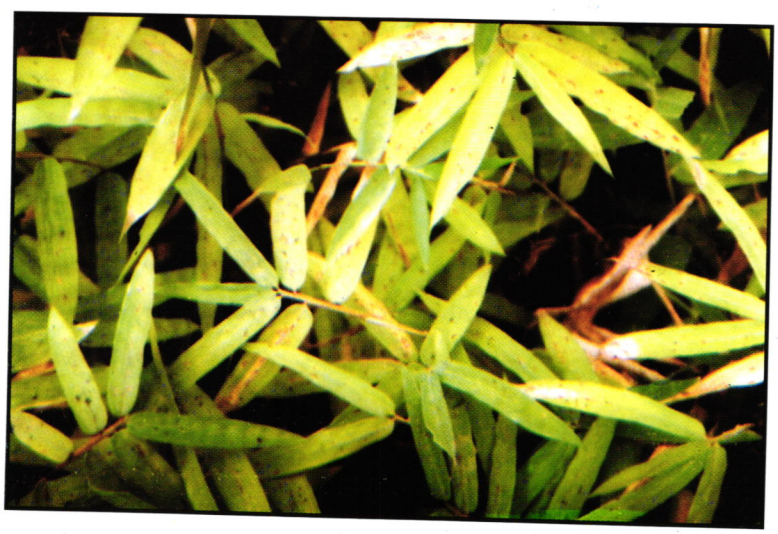

2. गेरूआ रोग (Leaf rust disease) -

मानसून के उपरान्त यह रोग भूरे काले धब्बों के रूप में पनपता है। जिससे रोग ग्रसित पत्तियों में बिना आकार के सूखे भाग का निर्माण होता है। इन धब्बों में फफूँद की एसियल अवस्थाओं का निर्माण होता है। इस एसियल धब्बों में अतिसूक्ष्म बीजाणु पैदा होते हैं। यह बीजाणु हवा द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचकर पत्तियों को संक्रमित करते हैं। इस रोग की अधिकता से रोग ग्रसित पत्तियां समय पूर्व ही गिर जाती है तथा पौधों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस रोग से बचाव हेतु रोपणियों में सितम्बर से अक्टूबर माह में सल्फेक्स फफूँद नाशक 0.2 प्रतिशत (4 ग्राम प्रति लीटर पानी में) का पत्तियों पर छिड़काव करने से लाभ मिलता है।

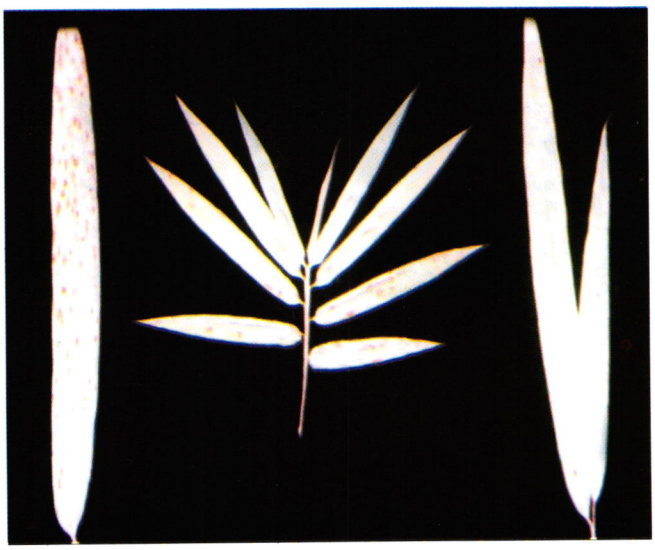

3. कन्द गलन रोग (Rhizome rot disease) -

यह रोग प्रायः एक से दो वर्ष की अवधि वाले बाँस के राइजोम में होता है। इस रोग के कारण संपूर्ण कन्द (राइजोम) गलने लगता है। यह बीमारी मुख्यतः दलदली भूमि या जहाँ पानी का समुचित निकास न हो वहाँ पाया जाता है। यह जीवाणु जनित रोग कटे फटे या जख्मी कन्द (राइजोम) में देखा जाता है। मिट्टी में पाये जाने वाले हानिकारक जीवाणु इस रोग को बढ़ावा देते हैं। इस रोग के कारण नये कल्ले बनने की प्रक्रिया में काफी व्यवधान होता है। इस रोग से बचाव के लिये बाँस का रोपण उठे हुये बेड़ों (*Raised bed*) में ही करना

चाहिए, जिससे पानी का ठहराव रोका जा सके। रोग की तीव्रता को कम करने के लिए प्लान्टोमाइसिन नामक जीवाणु नाशक दवा का छिड़काव (500 मिलीग्राम एक लीटर पानी में) करना चाहिये जिससे इस बीमारी को रोका जा सके।

4. कल्ला सड़न रोग (Culm rot disease) -

कभी-कभी बाम्बूसा अरन्डुनेरिया, बाम्बूसा वल्गेरिस, डेन्ड्रोकेलेमस स्ट्रिक्टस जाति के बाँस के नवजात कल्ले फूटते ही रोग ग्रस्त हो जाते हैं। नवजात कल्लों में किसी प्रकार के घाव या चोट के कारण जो कि रस चूसने वाले कीटों के द्वारा भी हो सकता है। रोग के लक्षण नवजात कल्लों में भूरे रंग के धब्बे के रूप में पाये जाते हैं। रोग कल्ले के आधार से शुरू होता है और ऊपर की ओर बढ़कर पूरे नवजात कल्ले को रोग ग्रसित कर संक्रमित कर देता है, यह रोग फ्यूजेरियम इक्वीसेटाई अथवा फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम नामक फफूँद के आक्रमण से होता है।

कभी-कभी नये कल्लों की शीर्ष पर सारोक्लेडियम ओराइजी नाम फफूँद के संक्रमण से नवजात कल्ले संक्रमित हो जाते हैं। यह रोग उड़ीसा प्रदेश में काफी मात्रा में देखा गया है। बरसात के दिनों में अधिक तापमान एवंअत्यधिक आद्रता होने पर यह रोग देखा जाता है। इस रोग से नवजात कल्लों के ऊपर शीथ पर सफेद रंग के बीजाणु देखे गये

हैं। अनुकूल परिस्थितियों में यह रोग महामारी के रूप में फैलकर बाँस की नई फसल को अत्यधिक प्रभावित करता है।

इस रोग से बचाव के लिए बाँस के भिर्रों के नीचे गिरे पत्ते जिसमें फफूँद के जीवाणु रहते हैं, इकट्ठा कर जला देना चाहिए एवं भिर्रों पर मिट्टी चढ़ा देने से स्वस्थ कल्ले निकलते हैं। रोग से बचाव के लिए डाईथेन -45, 0.2 प्रतिशत (3 ग्राम प्रति लीटर) + बाविस्टिन 0.1 प्रतिशत (2 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव अगस्त एवं सितंबर माह में पन्द्रह दिन के अन्तराल से करना चाहिए।

5. पर्ण गुच्छ रोग (Witches broom disease) -

इस रोग के कारण बाँस की टहनियां झाड़ू जैसे आकार की हो जाती है। मुख्य टहनियों से पर्ण गुच्छ (अल्प विकसित टहनियां) निकलती हुयी दिखाई देती है। यह रोग फिजियोलाजिकल कारणों से होता है एवं रोग किसी जीवाणु अथवा फफूँद के द्वारा नहीं होता। इस प्रकार की विकृत शाखाओं को निकाल कर फेंक देना चाहिए।

6. बाँस के भंडारण में पाये जाने वाले फफूँद (Storage fungi) -

जंगलों अथवा वृक्षारोपण स्थलों से बाँस की कटाई के बाद बाँस को काष्ठागारों में चट्टे बनाकर रखा जाता है। वैसे तो इसे शीघ्र ही उपयुक्त स्थान पर पहुंचा देना चाहिए जिससे फसल का समुचित उपयोग हो सके। किन्तु कभी-कभी इसका संग्रहण काष्ठागारों में काफी समय तक करना पड़ता है। इस अवस्था में वर्षा के कारण गीला होने पर इसमें कई प्रकार के फफूँदों का प्रकोप देखा जाता है। इनमें से कुछ फफूँद जैसे टारूला, आरथरीनियम, साइजोफिल्लम, ट्रेमेटिस, डडेलिया, माइक्रोपोरस, पोलिपोरस, ट्राइकोथीसियम एवं ट्राइकोडर्मा आदि मुख्य है। इन फफूँदों के प्रकोप से धीरे-धीरे बाँस की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इससे बचाव हेतु बाँस को बड़ी-बड़ी टंकियों में सोडियम पेन्टाक्लोरोफिनेट, बोरिक एसिड एवं बोरेक्स (0.5:1:2) के घोल से उपचारित किया जाता है। जिससे इन फफूँदों के प्रकोप से फसल को संक्रमण से सुरक्षित रखा जा सके।

संकलन एवं संपादन :

व्ही. एस. डडवाल एवं आर. के. वर्मा

विस्तृत जानकारी के लिए संपर्क करें :

प्रभागाध्यक्ष, वन विस्तार प्रभाग
उष्णकटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान
(भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद)
डाकघर - आर.एफ.आर.सी., मण्डला रोड
जबलपुर - 482021 (म.प्र.)
दूरभाष - 0761-2840746

(3) पांस केरोगा अउ ओला टोर कर अमाय हर नीचू मा दे घवे।

Amrit # 2413943